छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर
रिट याचिका क्र. 625/2004

याचिकाकर्तागण –

1. श्री श्याम लाल अग्रवाल, उम्र लगभग 55 वर्ष, पिता लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, निवासी बस स्टैंड, चरोदा, बी. एम. वाय, तहसील एवं जिला दुर्ग (छ.ग) (मृत)
2. मोहन लाल अग्रवाल, उम्र लगभग 50 वर्ष, पिता लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, निवासी मकान क्र. 16/491 लोधीपारा स्टेशन रोड, रायपुर, तहसील एवं जिला रायपुर (छ. ग)
3. मदन लाल अग्रवाल, उम्र लगभग 48 वर्ष, पिता लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, निवासी बस स्टैंड, चरोदा, तहसील एवं जिला दुर्ग (छ. ग)
4. गोवर्धन लाल अग्रवाल, उम्र लगभग 45 वर्ष, पिता लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, निवासी लोधीपारा, रायपुर, तहसील एवं जिला रायपुर (छ. ग)
5. पुरुषोत्तम दास अग्रवाल, उम्र लगभग 35 वर्ष, पिता लक्ष्मी नारायण अग्रवाल
6. तनसुख दास अग्रवाल, उम्र लगभग 38 वर्ष, पिता लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, क्र. 5 एवं 6 निवासी लोधीपारा, रायपुर, तहसील एवं जिला रायपुर (छ. ग)
7. मनसुख दास अग्रवाल, उम्र लगभग 33 वर्ष, पिता लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, निवासी स्टेशन रोड, रायपुर, तहसील एवं जिला रायपुर (छ. ग)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

विरुद्ध

उत्तरवादी – सरदार गुरुवचन सिंह, उम्र लगभग 35 वर्ष, पिता रवैल सिंह, निवासी फ्रेंड्स होटल रेस्टोरेंट, स्टेशन रोड, लोधिपारा, रायपुर (छ.ग)

भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत रिट याचिका

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका क्र. 625/2004

श्याम लाल अग्रवाल एवं अन्य

विरुद्ध

सरदार गुरुवचन सिंह

आदेश हेतु दिनांक 06 अगस्त 2004 को नियत किया गया।

सही/–

एल. सी. भादू

न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका क्र. 625/2004

श्याम लाल अग्रवाल एवं अन्य

विरुद्ध

सरदार गुरुवचन सिंह

उपस्थित :–

श्री एस. के. बेरीवाल, अधिवक्ता	याचिकाकर्तागण की ओर से
श्री बी. पी. शर्मा, अधिवक्ता	उत्तरवादी की ओर से

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

आदेश

(दिनांक 06 अगस्त 2004 को पारित)

एल. सी. भादू, न्यायाधीश

इस रिट याचिका को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत दायर किया गया है, जिसमें याचिकाकर्तागण ने दिनांक 24–01–2004 (अनुलग्नक –पी/7) को पारित आदेश की वैधता, वैधानिकता और औचित्य को चुनौती दी है। यह आदेश रायपुर के विद्वान 8 वें अतिरिक्त जिला न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक कोर्ट), खगेन्द्र सिंह द्वारा पारित किया गया था, जिसके द्वाराविद्वान अतिरिक्त न्यायाधीश द्वारा याचिकाकर्तागण द्वारा उत्तरवादी के विरुद्ध किराए की बकाया राशि की वसूली और वादग्रस्त परिसर से बेदखली के लिए दायर सिविल वाद क्रमांक 23–ए/2002 की आगे की कार्यवाही पर स्थगन लगा दिया गया है।

2. इस रिट याचिका के निराकरण के लिए आवश्यक संक्षिप्त तथ्यों के अनुसार, उत्तरवादी ने वर्ष 1982 में मूल मकान मालिक अमरजीत सिंह से 990 वर्ग फीट का वादग्रस्त परिसर किराए पर लिया था। तदुपरांत, अमरजीत सिंह ने दिनांक 19–5–1985 को पंजीकृत

विक्रय विलेख के माध्यम से 990 वर्ग फीट में से 770 वर्ग फीट का हिस्सा स्वर्गीय श्रीमती गुलाब बाई अग्रवाल को बेच दिया। इसके बाद, वर्ष 1988 में स्व. गुलाब बाई अग्रवाल ने उत्तरवादी के विरुद्ध किराए की बकाया राशि की वसूली एवं वादग्रस्त परिसर से बेदखली के लिए, किराया न देने और उपद्रव के आधार पर, मध्यप्रदेश आवास नियंत्रण अधिनियम, 1961 की धारा 12 के तहत एक वाद दायर किया, जिसे सिविल वाद क्रमांक 67–ए/99 के रूप में पंजीबद्ध किया गया। बाद में इसे 23–ए/2002 के रूप में पुनः पंजीबद्ध किया गया। उत्तरवादी का इस वाद में यह बचाव किया था कि वह श्रीमती गुलाब बाई अग्रवाल का किरायेदार नहीं है। इस सिविल वाद की लंबित रहने के दौरान श्रीमती गुलाब बाई अग्रवाल का निधन हो गया, अतः याचिकाकर्तागण को उनके वैध उत्तराधिकारी के रूप में अभिलेख में सम्मिलित किया गया।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. उत्तरवादी ने मूल मकान मालिक एवं याचिकाकर्तागण के विरुद्ध उक्त वादग्रस्त परिसर के विक्रय संविदा के विशिष्ट अनुपालन के लिए भी एक वाद दायर किया, जिसे सिविल वाद क्रमांक 74–ए/99 के रूप में पंजीबद्ध किया गया। अंततः, उक्त विक्रय हेतु संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन वाद को विद्वान जिला न्यायाधीश, रायपुर द्वारा दिनांक 8–4–2000 को खारिज किया गया, जिसके विरुद्ध उत्तरवादी ने इस न्यायालय में अपील दाखिल की है।

4. उत्तरवादी के विरुद्ध चल रहे बेदखली वाद के दौरान, उत्तरवादी की ओर से व्यवहार प्रक्रिया संहिता की धारा 10 के अंतर्गत एक आवेदन प्रस्तुत किया गया, जिसमें बेदखली वाद की कार्यवाही को इस आधार पर कि वादग्रस्त परिसर के विक्रय हेतु संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन से संबंधित वाद लंबित है, स्थगित करने का अनुरोध किया गया। परंतु यह आवेदन तीसरे अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा दिनांक 16–3–99 के आदेश द्वारा इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि यद्यपि दोनों वादों में एक या दो विवाद्यक

समान है, लेकिन मुख्य विवाद अलग–अलग है। उत्तरवादी ने इस आदेश के विरुद्ध कोई पुनरीक्षण याचिका दाखिल नहीं की, फलतः वह आदेश अंतिम रूप से मान्य हो गया। यद्यपि, विनिर्दिष्ट अनुपालन के वाद के खारिज हो जाने के पश्चात उत्तरवादी ने फिर से एक आवेदन व्यवहार प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के तहत अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के समक्ष प्रस्तुत किया, जिसमें कहा गया कि उन्होंने उच्च न्यायालय में अपील दायर की है जो लंबित है, अतः बेदखली वाद की कार्यवाही स्थगित की जाए। यह आवेदन भी अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा दिनांक 20 जून 2000 को खारिज किया गया। इसके बाद बेदखली के वाद की कार्यवाही जारी रखना स्वीकार किया और अंततः दोनों पक्षों को अपने साक्ष्य पेश करने की अनुमति देने के बाद विद्वान अष्ठम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा अंतिम तर्क सुनी गईं, तर्क सुनने के बाद वाद को 31 दिसंबर 2003 को निर्णय के लिए नियत किया गया था। यद्यपि, 31 दिसंबर 2003 को उत्तरवादी /उत्तरवादी के अधिवक्ता ने मौखिक अनुरोध किया कि उत्तरवादी ने विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वाद के खारिज होने के निर्णय के विरुद्ध अपील की है, इसलिए बेदखली के वाद की कार्यवाही स्थगित की जाए। अंततः, आक्षेपित आदेश के तहत विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने यह देखते हुए कार्यवाही स्थगित किया कि दोनों वाद में पक्ष एक ही हैं और वाद का कुछ विषय भी लगभग समान है। चूंकि पक्षकार एक ही हैं, इसलिए वाद की कार्यवाही स्थगित की गई, जिसके विरुद्ध याचिकाकर्तागण ने यह रिट याचिका दायर की है।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

5. मैंने याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता श्री एस.के. बेरीवाल और उत्तरवादी के विद्वान अधिवक्ता श्री बी.पी. शर्मा को सुना है।

6. उत्तरवादी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाई गई पहली आपत्ति यह है कि आक्षेपित आदेश के विरुद्ध भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत रिट याचिका पोषणीय नहीं है। याचिकाकर्तागण को यहां सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के तहत पुनरीक्षण प्रस्तुत

करना चाहिए था। लेकिन विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क बिना किसी बल के है क्योंकि जहां तक सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के तहत पुनरीक्षण दायर करने का संबंध है, सी.पी.सी की धारा 115 की उपधारा (1) का परंतुक यह निर्धारित करता है कि "परन्तु यह कि उच्च न्यायालय इस धारा के अधीन किसी वाद या अन्य कार्यवाही के दौरान पारित किसी आदेश या किसी मुद्दे पर निर्णय देने वाले किसी आदेश में परिवर्तन नहीं करेगा या उसे उलटेगा नहीं, सिवाय इसके कि यदि आदेश पुनरीक्षण के लिए आवेदन करने वाले पक्षकार के पक्ष में पारित किया गया होता तो वाद या अन्य कार्यवाही का अंतिम रूप से निराकरण हो जाता।" अत: व्यवहार प्रक्रिया संहिता में संशोधन के पश्चात्, 1999 के अधिनियम क्र.46 द्वारा सी.पी.सी. की धारा 115 के अन्तर्गत पुनरीक्षण शक्ति को बहुत हद तक सीमित कर दिया गया है तथा उपरोक्त परन्तुक के अनुसार किसी भी आदेश के विरूद्ध पुनरीक्षण केवल उस स्थिति में होता है जब यदि आक्षेपित आदेश पुनरीक्षण के लिए आवेदन करने वाले पक्षकार के पक्ष में पारित किया गया होता तो वाद या अन्य कार्यवाही का अंतिम रूप से निराकरण हो जाता। इस मामले में, आरोपित आदेश विद्वान अष्टम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा उत्तरवादी के अधिवक्ता द्वारा निहित शक्तियों के तहत कार्यवाही को संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वाद में पारित दिनांक 8–4–2000 के निर्णय के विरुद्ध अपील के निराकरण तक रोकने के लिए किए गए मौखिक अनुरोध पर पारित किया गया था। अतः, भले ही आपेक्षित आदेश यहां याचिकाकर्तागण के पक्ष में किया गया होता, मुकदमे का निराकरण नहीं किया जा सकता था और फिर भी मामले के गुण–दोष के आधार पर विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा निर्णय पारित किया जाना था। अतः, मेरी राय में, उत्तरवादी के विद्वान अधिवक्ता का तर्क बलहीन है और यह सी.पी.सी की धारा 115 के प्रावधान के अनुसार मान्य नहीं है।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

7. अब, भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत इस रिट याचिका की पोषणीयता के सवाल पर आते हैं, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सूर्य देव राय बनाम राम चंद्र राय एवं अन्य जे.टी. 2003 (6) एस.सी. 465 में प्रतिवेदित है, के मामले में अभिनिर्धारित किया है;

> "उच्च न्यायालय के अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पारित अन्तर्वती आदेश, जिनके विरुद्ध पुनरीक्षण का उपचार शामिल नहीं किया गया है, उत्प्रेषण रिट तथा उच्च न्यायालय के पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार के अधीन चुनौती के लिए खुले हैं। उत्प्रेषण रिट या पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार के प्रयोग में उच्च न्यायालय स्वयं को अपील न्यायालय में परिवर्तित नहीं करेगा तथा साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन या मूल्यांकन करने या निष्कर्ष निकालने में त्रुटियों को सुधारने या मात्र औपचारिक या तकनीकी प्रकृति की त्रुटियों को सुधारने में लिप्त नहीं होगा। जहां अधीनस्थ न्यायालय ने ऐसा क्षेत्राधिकार ग्रहण कर लिया है जो उसके पास नहीं है या वह ऐसा क्षेत्राधिकार प्रयोग करने में विफल रहा है जो उसके पास है या जो क्षेत्राधिकार उपलब्ध है, उसका प्रयोग ऐसे तरीके से किया जा रहा है, जो विधि द्वारा अनुमत नहीं है और न्याय की विफलता या गंभीर अन्याय हुआ है, वहां उच्च न्यायालय अपने पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के लिए कदम उठा सकता है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

एक अन्य मामले राज्य द्वारा, विशेष सेल, नई दिल्ली बनाम नवजोत संधू उर्फ अफसान गुरु एवं अन्य, जे.टी. 2003 (4) एस.सी. 605 में प्रतिवेदित में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि;

"भारतीय संविधान का अनुच्छेद 227 उच्च न्यायालय को उन सभी न्यायालयों और न्यायाधिकरणों पर अधीक्षण की शक्ति देता है, जिनके संबंध में वह अधिकारिता का प्रयोग करता है। इस अधिकारिता को राज्य विधानमंडल के किसी अधिनियम द्वारा सीमित या बाधित नहीं किया जा सकता है। पर्यवेक्षी अधिकारिता अधीनस्थ न्यायाधिकरणों को उनके अधिकार की सीमाओं के भीतर रखने और यह सुनिश्चित करने तक विस्तारित है कि वे विधि का पालन करें। अनुच्छेद 227 के तहत शक्तियाँ व्यापक हैं और न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए उनका उपयोग किया जा सकता है। उनका उपयोग अंतवर्ती आदेश में भी हस्तक्षेप करने के लिए किया जा सकता है। यद्यपि, अनुच्छेद 227 के तहत शक्ति एक विवेकाधीन शक्ति है और उच्च न्यायालय के आदेश को ऐसी शक्ति का स्रोत मानना मुश्किल है, जब उच्च न्यायालय स्वयं ऐसी किसी विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करने का दावा नहीं करता है। यह स्थापित विधि है कि अनुच्छेद 227 के तहत न्यायिक अधीक्षण की इस शक्ति का प्रयोग संयम से किया जाना चाहिए और केवल अधीनस्थ न्यायालयों और न्यायाधिकरणों को उनके अधिकार की सीमाओं के भीतर रखने के लिए किया जाना चाहिए, न कि केवल त्रुटियों को ठीक करने के लिए। इसके अलावा, जहां विधि पुनरीक्षण शक्तियों के प्रयोग पर प्रतिबंध लगाता है, वहां भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत हस्तक्षेप करने के लिए बहुत ही असाधारण परिस्थितियों की आवश्यकता होगी, क्योंकि अधीक्षण की शक्ति का उद्देश्य वैधानिक विधि को दरकिनार करना नहीं था। यह स्थापित विधि है कि अनुच्छेद 227 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग "छिपे हुए अपील के आवरण के रूप में" नहीं किया जा सकता है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अतः, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के मद्देनजर, जहां उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि अधीनस्थ न्यायालय ने विधि द्वारा अनुमत तरीके से अधिकार क्षेत्र का प्रयोग नहीं किया है और न्याय की विफलता या गंभीर अन्याय हुआ है, तो उच्च न्यायालय अपने पर्यवेक्षी अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए कदम उठा सकता है।

8. उपरोक्त सिद्धांत को देखते हुए, अब मैं वर्तमान वाद के तथ्यों की जांच करने और यह देखने के लिए आगे बढ़ूंगा कि क्या अष्टम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेश माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उपरोक्त दो निर्णयों में प्रतिपादित परीक्षण के आगे टिकता है या नहीं। यह स्वीकृत स्थिति है कि याचिकाकर्तागण की पूर्ववर्ती हकदार अर्थात् श्रीमती गुलाब बाई ने वादग्रस्त परिसर को उत्तरवादी के मूल मकान मालिक अमरजीत सिंह से खरीदने के पश्चात उत्तरवादी के विरुद्ध मध्यप्रदेश आवास नियंत्रण अधिनियम, 1961 की धारा 12 के अंतर्गत चूक, बकाया किराया और उपद्रव के आधार पर बेदखली का वाद दायर किया, जबकि उत्तरवादी ने मूल मकान मालिक अमरजीत सिंह और याचिकाकर्तागण के विरुद्ध विक्रय की संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वाद दायर किया। उक्त वाद को विद्वान जिला न्यायाधीश ने दिनांक 8–4–2000 के निर्णय के माध्यम से विचारण के पश्चात खारिज कर दिया, अतः मेरे मत में, यद्यपि उपरोक्त दोनों वादों में एक ही पक्षकार थे, किन्तु जहां तक व्यवहार प्रक्रिया संहिता की धारा 10 की अन्य आवश्यकता का प्रश्न है, यह शर्त कि विवादित वाद पहले से संस्थित वाद में भी प्रत्यक्षतः तथा सारतः विवादित होना चाहिए, बाद में संस्थित वाद की कार्यवाही पर स्थगित करने के लिए पूरी की जानी चाहिए। लेकिन वर्तमान वाद में, दोनों वादों में वाद

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

सीधे और मूल रूप से एक जैसा नहीं माना जा सकता है, क्योंकि उत्तरवादी ने मूल मकान मालिक के विरुद्ध विक्रय की संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए एक प्रकरण दायर किया था, जबकि याचिकाकर्तागण ने उत्तरवादी के विरुद्ध चूक, किराए के बकाया और उपद्रव के आधार पर बेदखली के लिए एक प्रकरण दायर किया था, जिसमें विचारण न्यायालय यानी विद्वान अष्टम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश को यह तय करना था कि क्या याचिकाकर्ता उनके और उत्तरवादी के बीच मकान मालिक और किरायेदार का संबंध स्थापित करने में सक्षम थे और दूसरा मुद्दा यह था कि क्या याचिकाकर्ता उत्तरवादी के विरुद्ध चूक का आधार साबित करने में सक्षम हैं, जैसा कि म.प्र. आवास नियंत्रण अधिनियम, 1961 की धारा 12(1)(ए) के तहत परिकल्पित है, जबकि विक्रय की संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए प्रकरण उत्तरवादी द्वारा दायर किया गया था। इसमें यह मुद्दा शामिल था कि क्या मूल मकान मालिक अमरजीत सिंह ने उत्तरवादी के साथ वादग्रस्त परिसर की बिक्री के लिए संविदा किया था। उस प्रकरण में, उत्तरवादी को यह साबित करना था कि (i) क्या विक्रय के लिए संविदा सही और वास्तविक था, (ii) क्या विक्रेता संविदा के अपने हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक था और (iii) क्या बाद में हस्तांतरित व्यक्ति को पहले के समझौते की सूचना थी। यदि संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के मुद्दे में आवश्यक सभी तत्व स्थापित पाए जाते हैं और डिक्री का पालन किया जाता है, तो बिक्री विलेख किसी भी पक्ष द्वारा निष्पादित और पंजीकृत किया जाएगा या उनकी विफलता पर न्यायालय द्वारा और उसके बाद विक्रेता वादग्रस्त संपत्ति का स्वत्व प्राप्त करेगा। वादग्रस्त संपत्ति में उस वाद में स्वत्व प्राप्त किए बिना, उत्तरवादी बेदखली प्रकरण की कार्यवाही को रोकने का हकदार नहीं था। इसके अलावा, यदि उत्तरवादी अपील में सफल होता है, तो वह कब्जे का हकदार होगा और उस अनिश्चित घटना के लिए याचिकाकर्तागण के अधिकार जो उन्हें म.प्र. आवास नियंत्रण अधिनियम, 1961 की धारा 12 के तहत उपलब्ध हैं, खतरे में नहीं डाले जा सकते।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

9. इस प्रकार उपरोक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि दोनों वादों में विषय वस्तु और दोनों वादों में पक्षकारों के बीच विवाद के क्षेत्र की कोई ठोस पहचान नहीं थी। बेदखली के वाद के मुद्दे में प्रत्यक्ष और मूल रूप से प्रकरण वही नहीं था जो संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के वाद में था। इसके अलावा, उत्तरवादी द्वारा दायर विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए प्रकरण पहले ही विद्वान जिला न्यायाधीश द्वारा दिनांक 8–4–2000 के अपने निर्णय के तहत खारिज कर दिया गया था, जिसमें कहा गया था कि उत्तरवादी यहां वादग्रस्त परिसर के संबंध में मूल मकान मालिक द्वारा बिक्री के लिए समझौते के अस्तित्व और निष्पादन को साबित करने में सक्षम नहीं था। इस संबंध में, मैं मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, उड़ीसा उच्च न्यायालय और पटना उच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णयों से अपने विचार को मजबूत करता हूं, जो प्रकाश चंद सोनी बनाम अनीता जैन 2002 (2) एम.पी.एल.जे.121 में , त्रिवेणी देवी नारायण दास बनाम विजय मोहन बोस 1976 एम.पी.एल.जे. 163 में , लछमन नेपक और अन्य बनाम बदनकयालु श्यामा बाबू सुबुद्धि और अन्य एआईआर 1989 उड़ीसा 154 और डॉ एन.पी. त्रिपाठी बनाम श्रीमती दयामंती देवी व अन्य ने एआईआर 1988 पटना 123 में प्रतिवेदित है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

10. यहां यह उल्लेख करना अनुचित नहीं होगा कि उत्तरवादी द्वारा व्यवहार प्रक्रिया संहिता की धारा 10 के तहत दायर स्थगन आवेदन को तृतीय अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने 16–3–99 को यह कहते हुए खारिज कर दिया था कि प्रकरण की कार्यवाही पर रोक नहीं लगाई जा सकती क्योंकि सी.पी.सी. की धारा 10 के प्रावधान लागू नहीं होते थे। विनिर्दिष्ट अनुपालन के वाद को खारिज करने के बाद, विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने 20–6–2000 के आदेश के तहत व्यवहार प्रकरण की कार्यवाही को स्थगित करने के लिए सी.पी.सी. की धारा 151 के तहत दायर उत्तरवादी के आवेदन को फिर से खारिज किया। अतः, इन आदेशों के मद्देनजर भी, विद्वान अषठम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश को

आक्षेपित आदेश के तहत प्रकरण की कार्यवाही को स्थगित करने का अधिकार नहीं था और वह भी केवल उत्तरवादी के अधिवक्ता द्वारा किए गए मौखिक अनुरोध पर। अतः, अंतर्निहित शक्ति की आड़ में विद्वान अष्टम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा प्रयोग की गई उपरोक्त शक्ति विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा न्यायिक प्रक्रिया का दुरुपयोग के अलावा और कुछ नहीं है।

11.उत्तरवादी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि विद्वान अपर जिला न्यायाधीश ने व्यवहार प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अंतर्गत निहित शक्ति का प्रयोग करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया है। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का संदर्भ देना उपयोगी होगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मनोहर लाल चोपड़ा बनाम राय बहादुर राव राजा सेठ हीरालाल के प्रकरण में एआईआर 1962 एससी 527 में प्रतिवेदित मामले में अभिनिर्धारित किया कि:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

> "यह अच्छी तरह से स्थापित है कि संहिता के प्रावधान संपूर्ण नहीं हैं, इसका सीधा सा कारण यह है कि विधानमंडल भविष्य में प्रकरणों में उत्पन्न होने वाली सभी संभावित परिस्थितियों पर विचार करने और परिणामस्वरूप उनके लिए प्रक्रिया प्रदान करने में असमर्थ है। धारा 151 में स्वयं कहा गया है कि संहिता में ऐसा कुछ भी नहीं माना जाएगा जो न्याय के उद्देश्यों के लिए आवश्यक आदेश देने की न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति को सीमित या अन्यथा प्रभावित करे। आगे कहा गया है कि जब संहिता स्वयं न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति के अस्तित्व को मान्यता देती है, तो संहिता की सीमाओं के बाहर किसी भी शक्ति को लागू करने का कोई सवाल ही नहीं है। न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों का सहारा केवल वास्तविक और सारभूत न्याय करने के लिए अधिकारतः को ही लिया जाना चाहिए, जिसके प्रशासन के लिए न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग

को रोकने के लिए ही यह मौजूद है। । इसका प्रयोग अनुचित रूप से और मनमाने ढंग से नहीं किया जाना चाहिए।"

अतः, प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए और वह भी उत्तरवादी के अधिवक्ता द्वारा किए गए मौखिक अनुरोध पर, व्यवहार प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के तहत निहित शक्ति विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश को उपलब्ध नहीं थी, क्योंकि उत्तरवादी के अनुरोध को विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के पूर्ववर्तियों द्वारा 16–3–99 और 20–6–2000 के आदेशों के तहत प्रकरण की बेदखली की कार्यवाही को स्थगित करने के लिए दो बार पहले ही खारिज कर दिया गया था। सी.पी.सी. की धारा 151 के तहत निहित शक्ति का प्रयोग न्यायालय द्वारा बहुत ही असाधारण परिस्थितियों में किया जाना चाहिए और ऐसी शक्तियों का प्रयोग तब तक नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने और न्याय की विफलता को दूर करने के लिए ऐसी शक्ति का प्रयोग बिल्कुल आवश्यक न हो। इसके अलावा विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने व्यवहार प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के तहत निहित शक्ति का सहारा लेकर द्विपक्षीय उदार विधि अर्थात् म.प्र. आवास नियंत्रण अधिनियम, 1961 के मूल उद्देश्य और प्रयोजन को विफल कर दिया है, जिससे विधायी जनादेश समाप्त हो गया है और म.प्र. आवास नियंत्रण अधिनियम, 1961 की धारा 12 के प्रावधान निरर्थक हो गए हैं और ऐसी प्रक्रिया का सहारा लेना न केवल न्याय के उद्देश्यों के अधीन नहीं होगा बल्कि नियंत्रण अधिनियम के रूप में एक स्व–निहित संहिता द्वारा अनिवार्य विशेष प्रक्रिया को भी अभिभावी कर देगा। अधिनियम की धारा 12 को निरर्थक घोषित करने के लिए न्यायालय को प्रेरित करने का प्रयास करना वास्तव में न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा। अतः, इस प्रकरण में धारा 151 के तहत शक्तियां विचारण न्यायालय के पास उपलब्ध नहीं थीं।

12. इसके अलावा, याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि पूर्व न्याय के सिद्धांत पर भी विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश को आक्षेपित आदेश पारित करने का

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

अधिकार नहीं था, क्योंकि उत्तरवादी द्वारा सी.पी.सी. की धारा 10 और उसके बाद सी.पी.सी. की धारा 151 के तहत दायर आवेदनों को पहले ही 16-3-99 और 20-6-2000 के आदेशों के तहत खारिज कर दिया गया था, क्योंकि पूर्व न्याय के सिद्धांत उसी कार्यवाही में पारित मध्यवर्ती आदेश के प्रकरण में भी लागू होते हैं। मैं याचिकाकर्तागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाए गए बिंदु से पूरी तरह सहमत हूं, क्योंकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सत्यधन घोषाल और अन्य बनाम श्रीमती देवराजन देवी और अन्य जो ए.आई.आर 1960 एस.सी. 941 में प्रतिवेदित है, में अभिनिर्धारित किया है:

> "पूर्व न्याय का सिद्धांत एक ही प्रकरण के दो चरणों के बीच भी लागू होता है। इस सीमा तक कि एक न्यायालय, चाहे वह विचारण न्यायालय हो या उच्चतर न्यायालय, पहले चरण में किसी प्रकरण पर एक तरह से निर्णय लेने के बाद, पक्षकारों को उसी कार्यवाही के बाद के चरण में प्रकरण को फिर से उठाने की अनुमति नहीं देगा।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

इस संबंध में, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने आनंदी लाल अहिरवार बनाम सत्यव्रत चतुर्वेदी के प्रकरण में 2004 (I) एम.पी.जे.आर 175 में प्रतिवेदित है, में अभिनिर्धारित किया है:

> "एक बार गवाहों को बुलाने के लिए आवेदन को पहले खारिज कर दिया जाता है तो वह आदेश पूर्व न्याय के रूप में काम करेगा - गवाह को बुलाने के लिए नया आवेदन स्वीकार नहीं किया जा सकता है।"

13.अतः उपरोक्त विधिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए, मेरा मत है कि जब उत्तरवादी का आवेदन पूर्व में दो बार पूर्व न्याय के सिद्धांत के आधार पर अस्वीकार किया जा चुका था, तब माननीय अष्टम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश को व्यवहार प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग नहीं करना चाहिए था, वह भी तब जब उत्तरवादी के अधिवक्ता द्वारा मौखिक अनुरोध किया गया था और प्रकरण पहले ही तर्क सुनने के पश्चात निर्णय के लिए नियत हो चुका था।

14.परिणामस्वरूप, आक्षेपित आदेश अनुचित, त्रुटिपूर्ण और स्थापित विधि के विपरीत है, इसे कायम नहीं रखा जा सकता है, अतः, यह आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के अंतर्गत शक्ति का प्रयोग करते हुए रद्द किए जाने योग्य है, इस प्रकार यह रिट याचिका स्वीकार की जाती है। आक्षेपित आदेश रद्द किया जाता है। विचारण न्यायालय को वाद का विचारण करने का निर्देश दिया जाता है।

15. इस आदेश को समाप्त करने से पूर्व, मैं यह देखना आवश्यक समझता हूँ कि विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने अपने पूर्ववर्तियों द्वारा पारित दिनांक 16–3–99 और 20–6–2000 के पूर्व आदेशों की अनदेखी करके आक्षेपित आदेश पारित किया है, जिसमें उत्तरवादी द्वारा बेदखली वाद की कार्यवाही को स्थगित करने की प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया गया था। यह आश्चर्यजनक है कि इतने वरिष्ठ न्यायिक अधिकारी ने विधि के मूल सिद्धांतों और दो पूर्व आदेशों की अनदेखी करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया है। आक्षेपित आदेश न्यायिक अधिकारी की योग्यता, ज्ञान और आचरण को दर्शाता है। अतः, इस न्यायालय की रजिस्ट्री को निर्देश दिया जाता है कि वह इसे अधिकारी की ए.सी.आर. दर्ज करे और अधिकारी के विरुद्ध उचित कार्रवाई के लिए इस आदेश की प्रति माननीय मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखे।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

सही/–

एल. सी. भादू

न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated By .**K. Radhika**

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur